International Journal of Education and Science Research Review
Volume-11, Issue-2 March-April-2024 E-ISSN 2348-6457
(Peer-Reviewed, Open Access, Fully Refereed International Journal) P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Impact Factor - 7.02 Email- editor@ijesrr.org

आधुनिक समाज के परिवार में महिला के महत्व का एक अध्ययन

Suneeta Nirankari (Assistant Professor of History)

Governmant Girls Degree College Chhibramau Kannauj

Suneeta1982nirankari@gmail.com

सारांश, परिवार के बिना सामाजिक व्यवस्था की कल्पना करना कठिन है। इसके उत्पादन, पुनरुत्पादन, स्नेही देखभाल व भावनात्मक वातावरण में निवास उपलब्ध कराने की गतिविधियां, अन्य किसी भी संस्था द्वारा पूरी नहीं की जा सकती। महिलाओं के लिए परिवार वह स्थल है जहां उन्हें सुरक्षा एवं देखभाल अनुभव होती है परंतु यहीं परिवार वह स्थान भी है जहां महिलाएं अनेक तनाव झेलती हैं। इस तरह की जटिल संस्था बहुधा समाज वैज्ञानिकों और नीति–निर्माताओं द्वारा परखी जाती हैं और पारिवारिक गव्यात्मकता, लेखकों, मीडिया और सामाजिक कार्यकर्तताओं को प्रचुर संसाधन उपलब्ध कराती हैं। एक तरफ परिवार को निजी कार्यक्षेत्र के रूप में माना जाता है, परिवार की चारदीवारी के भीतर जो भी हो रहा है, उससे बाहर वाले को कोई मतलब नहीं, फिर भी राज्य, सक्रिय कार्यकर्ता (Activists) कई अवसरों पर पारिवारिक स्थिति में हस्तक्षेप करते हैं। पारिवारिक सत्ता से पीड़ित महिला, बाहरी एजेंसियों की ओर से पारिवारिक मसले में किए जा रहे हस्तक्षेप का स्वागत करती हैं। अमर्त्य सेन इस संस्था की समस्या का जिक्र करते हुए कहते हैं कि परिवार में 'मतैक्य और संघर्ष' का सह–अस्तित्व होता है।

मुख्य शब्द, कुटुंब परिवार,महिला, दायित्व, रिश्तेदारी, पालन–पोषण आदि

प्रस्तावना, साधारणतया जब हम परिवार शब्द का प्रयोग करते हैं तो इसमें संबंध, आवास, दायित्व और सांस्कृतिक लोकाचार को शामिल करते हैं, हालांकि परिवार और कुटुंब के बीच महत्त्वपूर्ण अंतर है। जब हम अपने चारों ओर देखते हैं तो हमें विभिन्न प्रकार के आवासीय आदर्श मिलते हैं उदाहरण के लिए जहां सभी बच्चे और अभिभावक साथ रहते हैं, एक जिसमें केवल अभिभावक रहते हैं, एक जिसमें बच्चे अपने अंकल या आंटी के साथ रहते हैं, एक जिसमें माँ अपने बच्चों के साथ रहती है, एक जिसमें पुरुष या एक स्त्री अकेले रहते हैं।[1] जनगणना के द्वारा कुटुंब शब्द में जनसंख्या के उस आवासीय इकाइयों को शामिल किया जाता है जहां सामान्यतः इसके सदस्य साथ रहते, खाना बनाते और साथ खाते हैं, छोटों का पालन–पोषण होता और वृद्धों की देखभाल होती है। परिवार, संबंध ज्यादा है जहां भावनात्मक बन्धन है और अधिकार व कर्तव्यों की आदर्शत्मक संरचना है। कुटुंब में रिश्तेदार दोनों तरफ (जन्म और वैवाहिक परिवार) से हो सकते हैं और इसमें किरायेदार और नौकरी भी सम्मिलित हो सकते हैं। संक्षेप में कुटुंब एक निवासीय इकाई है जबकि परिवार एक नातेदारी है जो सांस्कृतिक परंपरा और कानून दोनों के द्वारा अपने सदस्यों से अपेक्षित व्यवहार की आशा करता है। इस संदर्भ में कुछ वुमेन स्टडीज एकेडमी ने परिवार और कुटुंब के बीच भेद किया, कुटुंब लिंग पक्षपात करने वाला स्थल है और परिवार अपने सदस्यों के समाजीकरण का साधन है, जिसके द्वारा सदस्य इस अयोगमन व्यवस्था के मूल्यों और विचारधारा को स्वीकार करते और संप्रेषित करते हैं। अतः परिवार के ये परस्पर विरोधी आयाम बहुत जटिल भी हैं और दिलचस्प भी। परिवार में महिला की परिस्थिति काफी हद तक परिवार

की संरचना से प्रभावित होती हैः कौन परिवार का सदस्य हो सकता है? कितनी पीढ़ियां परिवार में शामिल हैं? परिवार में सदस्यों को संपोषित करने वाला कारक क्या है? विभिन्न वंश व्यवस्था किस प्रकार महिलाओं की भूमिका और परिस्थिति को प्रभावित करती हैं। दक्षिण एशिया में वंश व्यवस्था के दो मुख्य प्रकार हैं। यद्यपि कुछ अन्य एशियाई देशों में द्विपक्षीय वंश व्यवस्था प्रचलित है पर भारत में दक्षिण–पश्चिमी और उत्तरपूर्वी क्षेत्र के कुछ समुदायों को छोड़कर वंश व्यवस्था की पितृसत्तात्मक व्यवस्था ही प्रचलित है। हम पहले मातृसत्तात्मक व्यवस्था को देखेंगे।[2] मातृसत्तात्मक वंश व्यवस्था की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें पैदा होने वाले बच्चों (लड़का–लड़की) को मां की वंश व्यवस्था की तरफ से स्थायी सदस्यता मिलती है, और इसमें संबंध महिला की वजह से बनते हैं। अतः बच्चा अपनी पहचान माता द्वारा प्राप्त करता है। उदाहरण के लिए केरल में नायरों में तारवाड व्यवस्था, खासियों के मध्य 'कौप' (WOMB) और लक्षद्वीप के मुस्लिमों में भाई के बच्चे उसकी पत्नी की वंशावली से संबंधित होते हैं। विवाह, महिलाओं की सदस्यता में कोई परिवर्तन नहीं लाता। इसके अतिरिक्त पितृवंश व्यवस्था में विवाहिता लड़की को जो कुछ भी दिया जाता है, वह दूसरे घर (लड़की के ससुराल) चला जाता है, जबकि लक्षद्वीप द्वीप में यह विश्वास किया जाता है कि पुरुष के द्वारा अपने बच्चों को संपत्ति का उपहार देना, संपत्ति के विभाजन को प्रेरित करता है के0 सारदामोनी ने जब अपने परिवार के संबंध और प्रतिस्पर्धा का वर्णन किया तो उन्होंने अपनी मां का उल्लेख किया जो 1899 ई. में पैदा हुई थी, जिन्होंने स्कूली शिक्षा पायी थी परंतु वे उच्च शिक्षित नहीं थीं। 15 वर्ष की उम्र में उनका विवाह हो गया और 40 वर्ष की उम्र से पहले वे विधवा हो गई। 50 वर्षों से ज्यादा के वैधव्य की अवधि में उन्होंने परिवार व संपत्ति को संभाला और अपने चार बच्चों को बड़ा किया। सारदामोनी आगे बताती हैं कि ''मेरे पिता के तारवाड़ के सदस्यों ने हमेशा अपने स्नेह और आदर को दिखाया, पर ये उनका (मां पर) छोटा भाई था, जो जब तक जीवित रहा तब तक उन्होंने हमें पूरा सहयोग दिया, जिस घर में हम बड़े हुए वह मेरी मां को उत्तराधिकार में प्राप्त हुआ। उन्हें और हम बच्चों को अपने पिता द्वारा बनायी संपत्ति वंशानुगत रूप से प्राप्त हुई''। विवाह के विषय में यह उल्लेखनीय है कि विवाह के बाद महिला अपने पति के घर नहीं जाती, अतः स्वाभाविक रूप से पति उस घर जाता है, जिसमें उसकी पत्नी अपने अन्य महिला संबंधी और उनके पतियों के साथ रहती है। बड़े परिवारों में जहां कई परिवार एक साथ रहते हैं, इसमें बहुत से चावल के पात्र समा जाते हैं, जो दांपत्य इकाइयों को इंगित करते हैं। कुछ दुर्लभ मामले जैसे कि अगर परिवार में कोई लड़की नहीं है, तो ऐसे मामलों के अतिरिक्त इस संपत्ति में बेटों को कोई अधिकार नहीं मिलता। अगर महिला अपनी स्व–अर्जित संपत्ति के अधिकार का निर्धारण किए बिना मर जाती है तो उसकी मृत्यु के बाद संपत्ति परिवार की छोटी बेटी को मिलती है। खासी परिवारों की संरचना की एक विशिष्ट विशेषता यह होती है कि महिला संपूर्ण पारिवारिक संपत्ति पर अधिकार रखती है और छोटी बेटी सभी धार्मिक अनुष्ठानों को संपन्न करती हैं, उसके बावजूद भी बाहरी दुनिया में पुरुषों का प्रभुत्व होता है।[3] वे कहते हैं, ''युद्ध और राजनीति पुरुषों के लिए है और संपत्ति व बच्चे महिलाओं के लिए''। इस प्रकार मातृसत्तात्मक परिवारों की यह निश्चित विशेषीकृत विशेषता होती है जिसमें महिला के अधिकार और समाज में उनकी भूमिका पर ध्यान दिया जाता है। पितृसत्तात्मक समाजों में लड़के और लड़की दोनों की सामाजिक पहचान अपने पिता से होती है और पिता के वंश 'कुटुंब' में वे स्थान पाते हैं। परंतु लड़का इस इकाई का स्थायी सदस्य होता है जबकि बेटी अल्पकालीन या अस्थायी सदस्य के रूप में होती है। बेटा पितृवंश की निरंतरता को बनाए रखने वाला माना जाता है, लड़की अपने पिता के वंश को

चलाने वाली नहीं होती है, क्योंकि उसका बेटा, अपने पिता के वंश को चलाता है। यह आशा की जाती है कि विवाह के बाद लड़की थोड़े समय के लिए ही अपने पिता के घर ठहर सकती है। संस्कृति, लड़की के विवाह की और लगभग स्थायी रूप से संबंध–विच्छेदन की वकालत करती हैं। हमारा लोक संगीत और लोक साहित्य इस संदेश से भरा हुआ है। सामान्यतया नजदीक के रिश्तों में विवाह नहीं होते। वास्तव में दक्षिण भारत में हिंदू समुदायों में मातृवंश के मामा और भांजी के मध्य या ममेरे– फुफेरे भाई–बहन में विवाह के कुछ अपवाद हैं और मुस्लिमों में ममेरे–फुफेरे भाई–बहन या पितृवंश के भाई–बहन के मध्य विवाह भी बेटियों के परिवार में अस्थायी सदस्यता के विचार को प्रभावित नहीं करता।[4]

आज हमारा भारतीय समाज पितृसत्तात्मक समाजों की दूसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता उत्तराधिकार के तरीके और संसाधनों के वितरण की है। शुरुआत से ही पुरुष, संपत्ति के उत्तराधिकारी होते हैं और पुरुषों के ही द्वारा संपत्ति को हस्तांतरित किया जाता है। परंपरागत कानूनी रिवाज के अनुसार बेटियों को केवल भरण–पोषण और विवाह का अधिकार है। विवाह के समय मिलने वाले उपहार और सामान भी इसमें शामिल (महिलाओं के अधिकार) होते हैं (स्त्रीधन), जो कि परिवार की परिस्थिति और जिस जाति से परिवार संबंधित है, उसमें निर्धारित होता है। केवल पुत्र को ही जन्म से संपत्ति में अधिकार प्राप्त होता है। वास्तव में पिछले कुछ दशकों के दौरान महिलाओं के उत्तराधिकार के अधिकारों में बहुत परिवर्तन हुआ है, विशेषकर स्व–अर्जित संपत्ति में, परंतु सांस्कृतिक मूल्यों के आधिपत्य के अनुसार, बेटियां पैतृक संपत्ति पर कोई कानूनी दावा नहीं कर सकती। विचार के इस तरीके की जड़ इस विश्वास में है कि बेटी बाहरी हैं, किसी और की संपत्ति हैं (पराया धन) और अगर उसे उत्तराधिकार का अधिकार दिया जाता है तो संपत्ति किसी दूसरे परिवार में चली जाएगी। पितृसत्तात्मक समाज की यह विशेषता कई परेशानियों को खड़ा करती हैं जिसका सामना महिलाएं करती हैं। पिता–पुत्री, भाई–बहन का रिश्ता प्यार, त्याग और दायित्व जैसे भावनात्मक रिश्तों में व्यक्त होता है परंतु पारिवारिक संपत्ति पर बेटियों का कोई दावा नहीं है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था की एक निर्णायक विशेषता उनके निवास स्थान का तरीका है। भारत में आदर्श वैध परिवार पितृवंशीय, पितृस्थानीय संयुक्त परिवार है। इस संदर्भ में संयुक्त परिवार में आदर्शात्मक रूप से पुरुष संबंधी की तीन पीढ़ियां, उनकी पत्नियां और बच्चे रहते हैं। वे आपस में कई जिम्मेदारियां और कर्तव्य बांटते हैं। संयुक्त परिवार में परिवार का प्रमुख, परिवार का सबसे वयोवृद्ध सदस्य होता है (कर्त्ता), जिससे परिवार की तरफ से सभी धार्मिक अनुष्ठानों और समारोहों को करने की अपेक्षा की जाती है। परिवार के कर्त्ता द्वारा बेटे और बेटियों के विवाह–संबंध, पारिवारिक संपत्ति की व्यवस्था करना, उसको खरीदना, बेचना, दिन–प्रतिदिन के पारिवारिक आचरण, सभी को परिवार के अन्य पुरुष सदस्यों के सहयोग से नियंत्रित किया जाता है। घरेलू मोर्चा, खासकर पारिवारिक व्यवस्था की जिम्मेदारी परिवार की वयोवृद्ध महिला सदस्य के द्वारा निभायी जाती है। इसका दायित्व पारिवारिक सदस्यों की दिन–प्रतिदिन की घरेलू आवश्यकताओं की देखभाल करना और परिवार की अन्य छोटी महिला सदस्यों को नियंत्रित करना है। यह प्रायः उल्लेख किया जाता है कि परिवार की युवा बेटी हमेशा सास या ननद के आभास द्वारा नियंत्रित की जाती हैं। विवाह के बाद नवविवाहित दुल्हन पितृसत्तात्मक व्यवस्था के इस संगठन में प्रवेश करती है। आवास का यह परिवर्तन अक्सर पीड़ादायक होता है। पति के परिवार के लिए वह बाहरी होती हैं यद्यपि उसको अपने परिवार (पति के परिवार) में शामिल करने के

लिए सभी विशेष धर्मानुष्ठान किए जाते हैं। परिवार में वह वास्तविक रूप से तभी सम्मिलित होती हैं जब वह बेटे को जन्म देती हैं। पितृसत्तात्मक व्यवस्था में इस आदर्श की अपेक्षा की जाती है कि नई बहू को नियंत्रित किया जाए और उसे पति के परिवार के तौर–तरीकों के अनुसार प्रशिक्षित किया जाए। बहू के ससुराल की तुलना में मायके की स्थिति हमेशा निम्न होती है। सास, जो बाहरी सदस्य के तौर पर परिवार में आती है, लंबे समय तक परिवार में रहने के कारण अंतरंगी सदस्य बन जाती है और परिवार में आने वाली नई महिला सदस्यों पर प्रभुत्वपूर्ण व्यवहार करती हैं, प्रसिद्ध धारावाहिक ''सास भी कभी बहू थी'' एक सशक्त उदाहरण है। अक्सर सास परिवार की अन्य महिला सदस्यों के ऊपर पैतृक सत्ता को लागू करने में सहायक होती हैं। महिला सदस्यों में शक्ति के लिए संघर्ष होता है और किशोर दुल्हन (बहू) को दबाने के लिए पितृसत्ता, सास या ननद के माध्यम से छल कपटपूर्ण व्यवहार द्वारा असमान शक्ति का प्रयोग करती हैं। क्षेत्रीय साहित्य, लोकगीत, सिनेमा और टेलीविजन के धारावाहिक इन विषयों से भरे होते हैं। वास्तव में अक्सर ये सब साधन इस सत्ता संघर्ष को महिला मंडित करते हैं। लीला दूबे, पितृवंशीय परिवारों में लड़कियों की स्थानांतरीय सदस्यता की विशेषता पर प्रकाश डालती है, उनके विचार इस प्रकार हैं, ''नए घर में उसका (दुल्हन) का रहना कुछ शर्तों पर निर्भर है, उचित व्यवहार, घरेलू काम में उसकी दक्षता, अन्य सदस्यों से सौहार्दपूर्ण संबंध, परिवार के बड़े जनों की सेवा, पति को सुख आराम देना, एवं जो उपहार वह मायके से लायी हैं और संभवतः उसकी कमाई पर भी ससुराल का पूरा अधिकार होता है। ये कोई बहुत बड़ी बात नहीं है कि लड़की अपनी ससुराल से भगा दी जाए, वजह छोटी या बड़ी दोनों हो सकती है।'' बहू की कमाई पर पति या सास–ससुर के पूरे नियंत्रण का जिक्र करके, दूबे, छत्तीसगढ़ के प्रसिद्ध कहावत का हवाला देती है रू ''तुम किसके घर रहती हो और किसका चावल तुम खाती हो, तुमने ये वेतन कब कमा लिया ?'' दामाद का अपनी पत्नी (घर जमाई) के घर रूकने की सामाजिक मनोवृत्ति बहुत अपमानजनक और अप्रतिष्ठाजनक है।[5] ऐसा इसलिए क्योंकि विवाह के बाद महिला का स्थान पति के घर में है। 70 के दशक के महिला आदोलनों ने परिवार के तरीके के परिणाम से जुड़े सभी मुद्दों को अपने आंदोलन में शामिल किया मानव और उनके व्यवहारो में से क्या कठिन है? आवास के विषय में, आज्ञाकारिता, पति के परिवार के तौर–तरीकों को आत्मसात करना, पितृसत्तात्मक परिवार के सभी दावों को छोड़ देना और न करने की स्थिति में घरेलू हिंसा को सहना, जो महिलाओं पर किए जाते हैं। पितृसत्तात्मक मूल्य संरचना के परिणाम स्वरूप महिलाओं को शारीरिक और मानसिक दोनों उत्पीड़न सहना पड़ता है–जैसे कि दहेज उत्पीड़न, तलाक और पृथकता का लांछन, अपर्याप्त भरण–पोषण, बच्चों की परिरक्षा को लेकर संघर्ष और दिन–प्रतिदिन के अत्याचार।

निस्संदेह परिवार का दृढ़ ढांचा, वृहद विकास द्वारा गंभीर रूप से हिल रहा है। मुश्किल से ही आज आदर्श संयुक्त परिवार का अस्तित्व है, परंतु संयुक्त परिवार की आत्मा आज भी प्रबल है। परिवार के वर्गीकरण के निर्माण के दौरान समाज वैज्ञानिकों को गंभीर चुनौती का सामना करना पड़ा। लंबे समय से यह विश्वास किया जाता रहा है कि परिवार के दो मुख्य प्रकार है–संयुक्त और एकाकी साठ के दशक से परिवार के ऊपर कई क्षेत्र आधारित अध्ययन संपन्न हुए, जिससे यह पता चलता है कि वहां परिवार के और ज्यादा प्रकार है। पॉलिन कालेंडा ने 11 प्रकार के परिवारों को पहचाना जबकि ए.एम. शाह ने छः से सात प्रकार के परिवार माने। उदाहरण के लिए वेटा जो अपने अभिभावक और अंकल–आंटी के साथ रहता था, विवाह के बाद अपना अलग घर बसा लेता है। बाद में जब एक

अभिभावक या दोनों अभिभावक वृद्ध हो जाते हैं और अकेले नहीं रह सकते, तब सब साथ रहने लगते हैं और संयुक्त परिवार उभर आता है। अतः यह वर्तमान परिवार का विकास चक्र है। अधिकतर संयुक्त परिवार में दो पीढ़ियां रहती हैं परंतु पहले के संयुक्त परिवार में इस तरीके को वरीयता मिलती थी कि सभी भाई और उनके बच्चे संयुक्त निवास में रहे। इसके अतिरिक्त, भारतीय संदर्भ में ऐसा परिवार दुर्लभ नहीं है जिसमें एक पुरुष, उसकी पत्नी, उसके बच्चे और उसकी अविवाहित बहन या विधवा आंटी साथ रहते हों।[6]

निष्कर्ष, आज हमारे भारतीय समाज के परिवारों के संदर्भ में एक आश्चर्यजनक वास्तविकता यह है कि महिलाओं की प्रधानता वाले परिवारों की संख्या आज बढ़ रही है, विशेषकर तब जब नौकरी के लिए पुरुष का प्रयास किसी अन्य स्थान पर हो या जब पुरुष काम नहीं करता है और महिला के द्वारा परिवार की देखरेख एवं व्यवस्था की जाती है। यह अनुमान किया जाता है कि भारत में तीन परिवारों में से एक परिवार में महिला ही प्रधान होती है। बहुधा जब महिला काम करने के लिए गांव/शहर से बाहर जाती है तो परिस्थिति बिल्कुल विपरीत होती है और परिवार पृथक हो जाता है। नौकरी के लिए पुरुष या स्त्री द्वारा खाड़ी देशों में जाने का उदाहरण सामान्य है। इस तरह से परिवार में, सदस्यों की संख्या की समाकृति उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त, पारिवारिक समाजशास्त्रियों ने यह अवलोकन किया कि संयक्त परिवार का प्रतिरूप प्रायः ऊंची जातियों में, व्यापारिक समुदायों में और ग्रामीण क्षेत्रों के किसान भूमिधारियों में दिखाई देता है। अत्यधिक गरीब समुदायों और आदिवासियों के मध्य साधारणतया एकाकी परिवार का प्रतिरूप प्रचलित होता है। वास्तव में कुछ दशकों से, शहरी मध्य वर्ग, विशेषकर शिक्षित और व्यवसायिक वर्ग एकाकी परिवार के प्रतिरूप को पसंद करने लगे हैं। इसकी तुलना में, अर्थव्यवस्था में द्रुतगामी परिवर्तन, वैवाहिक रिश्तों के स्वरूप में बदलाव एवं व्यक्तिवादिता के उदय ने समाज से एकल अभिभावक परिवारों को निकाल दिया जिसमें माता और बच्चे या पिता और बच्चे साथ रहते थे। उसी प्रकार शहरों में ऐसे परिवार दुर्लभ नहीं हैं जहां एकल महिला रहती है। इस परिवार पर या परिवार के या कुटुंब के एक प्रकार पर विचार–विमर्श बहुत कठिन है। लैकिन आज भारतीय समाज के बिगढते माहौल को महिलाओं को शिक्षित करके बहुत सी तत्कालीन परिवार की समस्याओं से बचा जा सकता है। जिससे भारत का विकास तीब् गति के साथ हो सकेगा ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 विपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृ0 2
2 विश्व प्रकाश गुप्ता, मोहिनी गुप्त, स्वतंत्रता संग्रसम और महिलाएं, पृ0 91
3 डॉ एस0 उल. नागोरी, कान्ता नागोरी, भारतीय वीरांगनाएँ, पृ0 14–15
4 विश्वप्रकाश, गुप्त, मोहिनी गुप्त, स्वतंत्रता संग्राम और महिलाएँ, पृ0 94
5 एल0 पी0 माथुर, भारत की महिला स्वतंत्रता सेनानी, पृ0 15
6 शालिनी सक्सेना, स्वाधीनता आंदोलन में मध्याप्रान्त की महिलाएं, पृ0 2